सो किछु करि जितु मैलु न लागै ।।

भाग - 3

ईश्वर की 'ज्योति' ही सत् है तथा उसका 'नाम-रूपी' आत्म प्रकाश ही शुद्ध और निर्मल है ।

त्रि-गुणी मायकी मंडल में 'माया' के अनेक स्वरूप हैं, जो –

नाश्वान हैं
परिवर्तनशील हैं
अंधकारमय हैं
भ्रम हैं तथा
मिथ्या हैं ।

इसलिए यह समस्त दृश्टमान और अदृश्ट मायकी मंडल की रचना नश्वर, झूठी तथा **मैली है ।**

जिस प्रकार प्रकाश की अनुपस्थिति को अंधकार कहा जाता है, उसी प्रकार आत्म-प्रकाश अथवा 'नाम', 'शबद' की अनुपस्थिति या गैरहाज़िरी में ही माया का भ्रम-भुलाव प्रतीत होता है जिस में इस ब्रह्मांड की प्रकृति तथा प्रवृत्ति हो रही है ।

दूसरे शब्दों में 'नाम' का प्रकाश ही सत् तथा **निर्मल** है और नाम की अनुपस्थिति ही माया का अंधकार या **'मैल' है ।**

हरि बिनु सभु किछु मैला संतहु किआ हउ पूज चड़ाई ।। (पृ. 910)

नाम बिना सभु जगु है मैला दूजै भरमि पति खोई ।। (पृ. 1234)

चहु जुगि मैले मलु भरे जिन मुखि नामु न होइ ।। (पृ. 57)

संसार की रचना ईश्वर के 'कवाउ' या ख्याल द्वारा हुई है तथा ख्यालों द्वारा ही इसकी प्रकृति और प्रवृत्ति चल रही है ।

कीता पसाउ एको कवाउ ।।
तिस ते होए लख दरीआउ ।। (पृ. 3)

युद्ध के समय चारों ओर अंधेरा (black out) करना पड़ता है, ताकि दुश्मन रोशनी देख कर हमला न कर सके । ऐसे अंधेरे में हम घर के अंदर धीमी सी रोशनी करते हैं तथा खिड़कियां दरवाजे बंद कर देते हैं और शीशों पर काला कागज़ या मोटा पर्दा लगा देते हैं ताकि अन्दर की रोशनी बाहर न दिखाई दे सके ।

इसी प्रकार हमारी अन्तर-आत्मा में 'ज्योति' का निर्मल-प्रकाश सदा हो रहा है, परन्तु हमने अपने मन के शीशों पर **'गन्दे ख्यालों' का 'मैला रंग'** या भ्रम-भुलाव के मोटे परदे लगाए हुए हैं । इसी कारण आत्म-ज्योति का आंतरिक प्रकाश बाहर की ओर प्रकाशित नहीं हो पाता और हम भ्रम के अंधकार तथा अज्ञानता में ठोकरें खाते और दुःखी होते रहते हैं ।

उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि मायकी भ्रम-भुलाव के 'अंधकार' या अज्ञानता में **तुच्छ रूचियों** तथा तुच्छ ख्यालों और कर्मों द्वारा ही **हमारे मन को 'मैल' लगती है ।**

इसीलिए गुरू साहिब ने हमें उपदेश दिया है –

सो किछु करि जितु मैलु न लागै ।। (पृ. 199)

इस का अर्थ यह है कि हम वह ख्याल या कर्म न करें, जिससे हमारे मन को 'और मैल' लगे ।

परन्तु, यदि ध्यान से अपने अंदर झांकें – तो पता चलेगा कि हम हर क्षण, पल-पल, दिन-रात वही ख्याल या कर्म करते हैं जिनसे हमारे मन की मैल और बढ़ती जाती है । इसी कारण सारा संसार, आत्मिक ज्योति के निर्मल प्रकाश के प्रेम तथा बरिश्शों से वंचित रहता है तथा दुःखदायी जीवन व्यतीत करता है ।

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. 133)

मैला हरि के नाम बिनु जीउ ।। (पृ. 1224)

ज्यों-ज्यों हम प्रकाश से दूर होते जाते हैं – त्यों-त्यों अंधकार बढ़ता जाता है और प्रकाश कम होता जाता है ।

इसके ठीक विपरीत ज्यों-ज्यों हम रोशनी के नज़दीक आते हैं – त्यों-त्यों अंधकार या मन की मैल कम होती जाती है, तथा रोशनी के प्रकाश में पहुँच कर, अंधकार या 'मैल' स्वतः आलोप हो जाती है ।

इसी प्रकार ज्यों-ज्यों हमारी वृत्ति आत्म-ज्योति के निर्मल प्रकाश अथवा 'नाम' से दूर या ईश्वर की 'भूल' में जाती है – त्यों-त्यों मायकी मंडल की **'मैल' का अक्स** हमारे मन पर पड़ता है, तथा धीरे-धीरे माया के भ्रम-भुलाव के अंधकार के कारण हम श्रद्धाहीन या नास्तिक होते जाते हैं ।

दूसरी ओर, ज्यों-ज्यों हम साध-संगति में विचरण करते हुए नाम-सिमरन, शबद-सुरति का अभ्यास करते हैं, त्यों-त्यों आत्म-प्रकाश का उजाला या अनुभवी ज्ञान बढ़ता जाता है ।

किरपा करे जिसु पारब्रहमु होवै साधू संगु ।।
जिउ जिउ ओहु वधाईऐ तिउ तिउ हरि सिउ रंगु ।। (पृ. 71)

इस **'हरि रंग'** द्वारा ही हमारे मन की मैल उतर सकती है –

भरीऐ मति पापा कै संगि ।।
ओहु धोपै नावै कै रंगि ।। (पृ. 4)

यह **'नावै का रंग'** (नाम-रंग) या श्रद्धा भावना की प्रेम-स्वैपना गुरप्रसाद द्वारा, साध-संगत में गुरमुख जनों, संतों तथा महापुरुषों की संगति, सेवा तथा 'छुह' द्वारा ही प्राप्त हो सकती है –

साधसंगति होइ निरमला कटीऐ जम की फास ।। (पृ. 44)

मिलि साधू दुरमति खोए ।।
पतित पुनीत सभ होए ।। (पृ. 624)

गई गिलानि साध कै संगि ।।
मनु तनु रातो हरि कै रंगि ।। (पृ. 892)

हरि के संत संत भल नीके
मिलि संत जना मलु लहीआ ।। (पृ. 1294)

जनम जनम की हउमै मलु लागी
मिलि संगति मलु लहि जावैगो ।। (पृ. 1309)

तुच्छ रुचियों तथा गन्दे ख्यालों वाले लोगों से ही हमारा अक्सर वास्ता पड़ता है, जिन की कुसंगति में हम मसाले लगा-लगा कर ईर्ष्या-द्वैष, वैर-विरोध, चुगली-निंदा की बातें कर-कर के, अपने पुराने शिकवे-शिकायतें तथा घृणा की गाँठे खोल कर, एक दूसरे को सुना कर, अपने अंदर इकटठी की हुई गन्दी 'भड़ास' निकाल कर मन हल्का करते हैं तथा इस में बहुत स्वाद लेते हैं। जब भी दो-चार स्त्रियाँ या पुरुष –

घरों में
यात्रा में
अदालतों में
सत्-संग में
धर्म-स्थानों में
विवाह-शादियों में
शोक सभाओं में

इकट्ठे होते हैं – वहां हमारा यही शुगल या दिल बहलाव होता है तथा मना करने पर भी रुक नहीं पाते। क्योंकि हमारी **रुचियां मलिन होने के कारण,** हमारे अन्दर से स्वतः गन्दी 'भड़ास' ही निकलती है। इस प्रकार हम लोगों की **'गन्दी गाँठें' खोल कर (निन्दा करके), अपना मन और भी गन्दा करते जाते हैं।**

मध्यम कोटि के ख्याल, जैसे – शोच-स्नान, व्यवसाय करना, खेलना, सोना आदि, यद्यपि निर्दोष प्रतीत होते हैं परन्तु वास्तव में सभी ख्याल, कर्म, धर्म आदि त्रि-गुणी मायकी मंडल के भ्रम-भुलाव तथा **अहम् की 'रंगत' में ईश्वर की 'याद' में से निकल कर या उसे 'भुला' कर किए जाते हैं। ईश्वर को भुलाना ही मन को 'मैल' लगाना है।**

नामु तिआगि करे अन काज ॥
बिनसि जाइ झूठे सभि पाज ॥
नाम संगि मनि प्रीति न लावै ॥
कोटि करम करतो नरकि जावै ॥ (पृ. 240)

सोई मलीनु दीनु हीनु जिसु प्रभु बिसराना ॥ (पृ. 813)

नानक विणु नावै आलूदिआ जिती होरु खिआलु ॥ (पृ. 1097)

हम अपनी-अपनी 'रुची' अनुसार एक दूसरे का असर लेते-देते हैं। उदाहरणस्वरूप **'मक्खी'** गन्दी मानी जाती है, जो केवल गन्दे स्थान पर ही बैठती है। जहां भी मैल की छींट या दाग लगा हो, वहीं मक्खियां इकट्ठी हो जाती हैं। मक्खी को गन्दगी से प्रेम है, इसलिए 'गन्दगी' ही मक्खी को आकर्षित करती है। इनकी निगाह तथा सूंघने की शक्ति इतनी तीक्ष्ण होती है कि गन्दे, मैले, 'दाग' को तुरन्त पहचान लेती हैं। इनके अन्तः करण में 'गन्दगी' से प्रेम तथा आकर्षण इतना तीव्र होता है कि बार-बार उड़ाने पर भी नहीं हटतीं और फिर-फिर गंदगी को ही आ चिपकती हैं। साफ-स्वच्छ स्थान पर कम ही बैठती हैं।

चींटियों का मीठे की ओर 'आकर्षण' की भांति, **मक्खियों** का गन्दगी की ओर आकर्षण या 'व्यवहार', प्राकृतिक नियम या 'हुकुम' अनुसार ही है।

'Like attracts like'

तुरदे कउ तुरदा मिलै उडते कउ उडता ।।
जीवते कउ जीवता मिलै मूए कउ मूआ ।। (पृ. 788)

प्रकृति के वायुमंडल में अनेक ध्वनियां ओत-प्रोत-परिपूर्ण हैं। जिस मीटर (meter) तथा वेवलैंग्थ (wavelength) पर रेडियो (radio) लगाएंगे – उसी मीटर तथा वेवलैंग्थ वाली ध्वनि को रेडियो पकड़ेगा तथा अन्य किसी ध्वनि को नहीं पकड़ता।

इसी प्रकार एक जैसी अच्छी या बुरी रुचियों या रंगत वाले मन की 'किरणें' तत्काल आपस में जा मिलती हैं।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि हमारे मन की रंगत या अन्तःकरण, अपने जैसी अन्य मानसिक किरणों को अपनी ओर अवश्य आकर्षित करता है। इसीलिए शराबी, अमली, चोर, व्याभिचारी आदि, तुच्छ रुचियों वाले व्यक्तियों को अनजाने ही, सहज स्वभाव अपनी ओर आकर्षित करते हैं तथा धीरे-धीरे उन्हें भी अपने जैसा 'व्यसनी' बना लेते हैं।

इस प्राकृतिक नियम अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति अपने मन की रुचियों अनुसार अपना-अपना वातावरण बना रहा है। दूसरे शब्दों में हम अपने – खयालों और रुचियों अनुसार ही –

अपना वातावरण
अपना अन्तःकरण

अपने छोटे से संसार का दायरा
अपना जीवन-लक्ष्य
अपना भाग्य
अपना अच्छा या बुरा जीवन

बना रहे हैं ।

आम जनता का रुझान या मन का 'रुख' या 'रुचि' तुच्छ अथवा मैले ख्यालों तथा कुसंगति की ओर ही है । जिस द्वारा हम अपने मन को और मलिन करते जाते हैं तथा हर क्षण अनजाने ही सहज-स्वभाव समस्त निर्मल प्रकृति को भी मलिन व प्रदूषित करते जाते हैं । इस प्रकार हम अपने घर का वातावरण मलिन करने के अतिरिक्त सम्पूर्ण ब्रह्मांड के वातावरण को प्रदूषित करने में भी अपना योगदान दे रहे हैं ।

ईश्वर ने यह 'कुदरत' जीवों के लिए सुन्दर, सुहावनी तथा सुखदायी बनाई है। परन्तु हमने अपनी मलिन रुचियों द्वारा इसे मैला कर दिया है तथा पल-पल और मैला करते जा रहे हैं । **'बलिहारी कुदरत'** का वातावरण पहले ही अत्यन्त मलिन हो चुका है । यदि ब्रह्मांड के वातावरण को सुधारने या स्वच्छ करने में हम सहायक नहीं हो सकते, तो इसे और **प्रदूषित करने का भी हमें कोई अधिकार नहीं ।**

इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि सारे संसार में –

ईर्ष्या
द्वेष
नफरत
जुल्म
बेईमानी
भ्रष्टाचार
कालाबाजारी (blackmarketing)
स्वार्थ
लूट-मार
छीना-झपटी
लड़ाईयां
झगड़े
जुल्म

आदि, बढ़ते ही जा रहे हैं तथा **सांसारिक जीवन में** –

शक
डर
चिंता
सहम
अस्थिरता
अशांति
खींच-तान
तनाव
नैतिक पतन

का बोलबाला तथा व्यवहार हो रहा है, जिसके कारण हमारा जीवन 'नरकमय' बनता जा रहा है ।

मेले, सिनेमा, टी.वी., नाटक, थीएटरों में तो इतनी भीड़ होती है कि टिकट ब्लैक में बिकते हैं, परन्तु 'सत्संग' में बहुत कम लोग हाज़िर होते हैं । क्योंकि हमारे मन में तुच्छ रुचियों का बाहुल्य है, जिस कारण हमें उत्तम, सुन्दर, निर्मल विचार **भाते ही नहीं ।** यदि किसी को सत्संग द्वारा उत्तम एवम् रचनात्मक विचार आते भी हैं, तो तुच्छ मलिन रुचियों के आकर्षण या उकसाहट से शीघ्र ही हम पुरानी तुच्छ रुचियों के 'बहाव' में बह जाते हैं ।

हम अपनी अज्ञानता तथा भ्रम-भुलाव में अपने बुरे वातावरण, रोग, दुःख-क्लेश के लिए 'अन्य लोगों' को या अपने भाग्य को दोष देते हैं, परन्तु गुरबाणी अनुसार हमारा यह ख्याल या निश्चय निर्मूल तथा गलत है ।

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ ।।
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ।। (पृ. 433)

नानक अउगुण जेतड़े तेते गली जंजीर ।। (पृ. 595)

जो जो करम कीओ लालच लगि तिह तिह आपु बंधाइओ । (पृ. 702)

वास्तव में हम अपने वातावरण, भाग्य तथा भविष्य के अच्छे-बुरे होने के स्वंय ही जिम्मेदार हैं ।

यदि हम अपने वातावरण, भाग्य तथा भविष्य को अच्छा, उत्तम, सुखदायी तथा सुन्दर बनाना चाहते हैं, तो हमें अपने ख्यालों, धारणाओं, रुचियों तथा कर्मों को **बदलना पड़ेगा ।** अन्यथा हम अपनी पुरानी मलिन 'जीवन-प्रणाली' के प्रवाह में ही बहते रहेंगे तथा –

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. 133)

वाला जीवन व्यतीत करते रहेंगे ।

हम अपने घर के अन्दर-बाहर तथा आस-पास साफ-सुथरा रखने का प्रयास करते हैं तथा सुन्दर फरनीचर, परदे तथा भांति-भांति की सुन्दर वस्तुओं से सजाते हैं। बाहर कोठी का आंगन भी कई प्राकर के फूलदार पौधों आदि से सजाते हैं । कोठी के अन्दर तथा बाहर की यह सफाई और सजावट, हम अपनी सामर्थ्य अनुसार मन के शौक, लोकाचार, देखा-देखी तथा वाह-वाह की भूख की पूर्ति के लिए करते हैं।

जब किसी विशेष अतिथि या अफसर ने आना हो तो कोठी का अन्दर-बाहर, बडे चाव तथा शौक से साफ करते हैं तथा बढ़-चढ़ कर सजावट करने का हर सम्भव प्रयास करते हैं ।

परन्तु अफसोस और दुःख की बात है कि हमारी अन्तर-आत्मा में विराजमान 'कोट ब्रह्मांड को ठाकुर सुआमी' अकालपुरुष के **'मन मंदिर'** को –

स्वच्छ रखने
निर्मल करने
सजाने
चाव पूरे करने
श्रृंगार करने

के विषय में कभी –

ख्याल
चाव
उमाह
उद्यम
आवश्यकता

ही प्रतीत नहीं होती !!!

जितना चाव, शौक तथा यत्न हम अपने तन तथा वातावरण को साफ-सुथरा रखने और सजाने में लगाते हैं – उसके 'ठीक विपरीत' अपने हृदय के शहनशाह के मन-मन्दिर को मैले रव्यालों तथा प्रदूषित वातावरण द्वारा **'मैला' करते जाते हैं,** तथा इसी में अपनी चतुराई, बड़प्पन या भलाई समझते हैं ।

गुरबाणी के नित्य प्रति पाठ-कीरतन, कथा करते-सुनते हुए भी हमें अपनी अन्तर-आत्मा में विराजमान ईश्वर के 'अस्तित्व' का ज्ञान या निश्चय ही नहीं होता। यद्यपि गुरबाणी साफ शब्दों में अनगिनत विधियों से पुकार-पुकार कर, हमारी अन्तर-आत्मा में – 'मन-मन्दिर', 'निज-घर', 'बेगमपुर' की सूझ-बूझ तथा महत्त्व दर्शा रही है ।

यदि हमारे घर में कोई **विशेष 'अतिथि' (V.I.P.)** रहता हो, तो हम घर की सफाई तथा सजावट के अतिरिक्त – घर का वातावरण शांत और पवित्र रखने का अत्यंत ध्यान रखते हैं, ताकि आस-पास कोई शोर-गुल न हो तथा 'एकांत' और शांत वातावरण में कोई विघ्न न पड़े ।

आश्चर्य की बात है कि दिमागी स्तर पर समझते और जानते हुए कि परमेश्वर का निर्मल इलाही प्रकाश हमारी अन्तर-आत्मा में रचा-बसा हुआ है । परन्तु फिर भी हमें अपनी अन्तर-आत्मा में विद्यमान प्रीतम सच्चे प्रातशाह के 'अस्तित्व', 'हजूरी' तथा 'प्रकाश' का अनुभव ही नहीं तथा हमारी समझ, सूझ, ज्ञान, निश्चय – केवल हमारे दिमागी दायरे तक सीमित है ।

अहमग्रस्त मन के मायकी भ्रम-भुलाव में हम इतने गलतान, मस्त तथा ढीठ हो चुके हैं कि अनेक धर्म-कर्म करते हुए भी, अपनी अन्तर-आत्मा में, **'मन-मंदिर' को साफ रखने या 'मैल' से बचाने का कभी ख्याल या संकोच ही नहीं किया ।**

इस प्रकार अपने हृदय में 'प्रीतम' के निर्मल ईश्वरीय –

आसन
तख्त
निज-घर
सच-घर
बेगमपुरा

प्रकाश-मंडल
शब्द
नाम

के चारों ओर **'मानसिक वातावरण'** को –

जान-बूझ कर
लापरवाह होकर
बे-परवाही से
विमुखता से
ढीठताई से
चतुराई से

पल-पल, दिन-रात – **मैला करने में ही** अपनी चतुराई तथा बड़प्पन समझते हैं !!

इसके अतिरिक्त, 'प्रीतम' जी के 'निज-घर' अथवा 'मन-मंदिर' के आंगन में अपनी तुच्छ रुचियों द्वारा –

अहम्-भरी डींग हांकने
स्वार्थी रवींचतान
तृष्णा की **लपटें**
ईर्ष्या – द्वेष की **ज़हरीली भड़ास**
नफरत की **धूल**
शक के **बादल**
शिकवे-शिकायतों का **धुआं**
विषय-विकारों के **तूफान**
लोभ की **लहर**
क्रोध की **आंधी**
धर्मों के **तअस्सुब**
तुच्छ रुचियों की **भड़ास**
मलिन विचारों की **दुर्गन्ध**
मोह के **कीचड़**

द्वारा, अन्तर-आत्मा में अपने 'प्रीतम-प्यारे' की एकांत, शांति तथा वातावरण में – दिन-रात ढीठ होकर जबरदस्त 'विघ्न' डाल रहे हैं तथा **'मन मंदिर' के आंगन को माया का 'खेल-अखाड़ा' बना कर, अहम् की 'खिचड़ी' पका रखी है** तथा पांचों वासनाओं की 'फौज-हठीली' के लिए 'युद्ध-क्षेत्र' या 'कुरूक्षेत्र' बना रखा है ।

इस प्रकार हम गुरू साहिब के बताए हुए 'पथ्य' या परहेज –

सो किछु करि जितु मैलु न लागै ।। (पृ. 199)

से जान-बूझ कर बे-परवाह होकर 'उलघंन' करते हैं तथा गुरबाणी की ताकीद भरी ताड़ना –

मनि मैलै भगति न होवई नामु न पाइआ जाइ ।। (पृ. 39)

मनु मैला सचु निरमला किउ करि मिलिआ जाइ ।। (पृ. 755)

से अनजाने में ही –

लापरवाह हो कर
मस्त हो कर
विमुख हो कर
ढीठ हो कर

अपने **'मन-मंदिर' को नित्य-प्रति और मैला करते जाते हैं,** तथा –

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. 133)

वाला जीवन व्यतीत कर रहे हैं ।

जिस प्रकार शारीरिक रोगों के उपचार के लिए –

1. सही जांच (diagnosis)
2. सयाना हकीम (expert doctor)
3. सही उपचार (correct treatment)
4. परहेज (precautions)

की आवश्यकता है । उसी प्रकार **मानसिक रोगों के लिए भी** –

1. **'मैल' की जांच**
2. साध संगत
3. सेवा-भाव
4. नाम-सिमरन
5. परहेज

अनिवार्य है ।

इस लेख के पिछले भागों में **'मैल'** के मानसिक रोगों के सम्बंध में विस्तार सहित, खोज तथा जांच-पड़ताल की जा चुकी है ।

मानसिक रोगों के लिए **'गुरू-रूप'** बाणी ही सबसे 'उत्तम-श्रेष्ठ', सयाना, अचूक वैद्य है – जिसमें संसार के सभी शारीरिक और मानसिक रोगों के उपचार के लिए त्रुटिरहित, अटल तथा **अचूक नुस्खे दर्ज हैं ।**

मेरा बैदु गुरू गोविंदा ।।
हरि हरि नामु अउखधु मुखि देवै काटै जम की फंधा ।। (पृ. 618)

सरब रोग का अउखदु नामु ।। (पृ. 274)

संसारु रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना ।। (पृ. 687)

गुरबाणी में दर्ज अनेक कारगर, अक्सीर तथा आज़माए हुए 'नुस्खों' में से कुछ नुस्खों पर निम्नलिखित विचार की जाती है –

1. **साधसंगति** – जन्म-जन्मांतरों की मन की **'मैल'** उतारने के लिए निरंतर 'साध-संगत' में विचरण करने का ताकीद भरा हुकुम है ।

साधसंगति होइ निरमला कटीऐ जम की फास ।। (पृ. 44)

साधसंगि मलु सगली खोत ।। (पृ. 271)

साधसंगि पापा मलु खोवै ।। (पृ. 274)

साधसंगि मलु लाथी ।।
पारब्रहमु भइओ साथी ।। (पृ. 625)

करि साधसंगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीत ।। (पृ. 631)

महिमा साधू संग की सुनहु मेरे मीता ।।
मैलु खोई कोटि अघ हरे निरमल भए चीता ।। (पृ. 809)

हरि के संत संत भल नीके मिलि संत जना मलु लहीआ ।।
(पृ. 1294)

जनम जनम की हउमै मलु लागी
मिलि संगति मलु लहि जावैगो ।। (पृ. 1309)

2. **'नाम'** – **'नाम का रंग'** – जपुजी साहिब की एक पउड़ी में बताया गया है कि मैला शरीर या मैले वस्त्र साबुन से धोए जाते हैं । इसी प्रकार हमारी **'मति'** अथवा **'मन' भी 'नावै के रंग' द्वारा धोया जा सकता है ।**

भरीऐ हथु पैरुं तनु देह ।। पाणी धोतै उतरसु खेह ।
मूत पलीती कपुड होइ ।। दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ।।
भरीऐ मति पापा कै संगि ।।
ओहु धोपै नावै के रंगि ।। (पृ. 4)

गुरबाणी की अन्य अनगिनत पंक्तियों में भी मन की 'मैल' उतारने के लिए 'नाम' एक साधन बताया गया है –

नामि रते से निरमले गुर कै सहजि सुभाइ ।। (पृ. 32)

नानक निरमल ऊजले जो राते हरि नाइ ।। (पृ. 57)

दुरमति मैलु गई सभ तिन की
जो राम नाम रंगि राते ।। (पृ. 169)

नानक नामि रते से निरमल होर हउमै मैलु भरीजै ।। (पृ. 570)

निरमल नामि हउमै मलु धोइ ।।
साची भगति सदा सुखु होइ ।। (पृ. 664)

नामि रते मनु निरमलु होइ ।। (पृ. 841)

सदा सदा प्रभु जीअ कै संगि ।।
उतरी मैलु नाम कै रंगि ।। (पृ. 1339)

3. **'सिमरन-भजन'** – गुरबाणी में मन की मैल उतारने के लिए **'नाम-सिमरन'** अथवा भजन करना भी एक श्रेष्ठ तथा कारगर साधन बताया गया है –

प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ।।
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ।। (पृ. 263)

हरि की भगति करहु मन मीत ।।
निरमल होइ तुम्हारो चीत ।। (पृ. 288)

वाहु वाहु करतिआ मनु निरमलु होवै हउमै विचहु जाइ ।। (पृ. 515)

मन तन निरमल होई है गुर का जपु जपना ।। (पृ. 811)

हरि हरि नामु जपहु मेरे मीत ।।
निरमल होइ तुम्हारा चीत ।। (पृ. 866-867)

नामु जपत मनु निरमल होवै सूरवे सूरवि गुदारना ।। (पृ. 915)

भगति करे सो जनु निरमलु होइ ।। (पृ. 1173)

अहिनिसि नामु जपहु रे प्राणी मैले हछे होही ।। (पृ. 1254)

4. **'सेवा'** – भक्ति भावना से 'सेवा' करते हुए भी 'मैल' उतरती है तथा मन निर्मल होता है ।

गुर सेवा ते मनु निरमलु होवै अगिआनु अंधेरा जाइ ।। (पृ. 593)

गुर सेवा ते जनु निरमलु होइ ।।
अंतरि नामु वसै पति ऊतम होइ ।। (पृ. 664)

भनति नानकु सुणहु जन भाई ।।
सतिगुरु सेविहु हउमै मलु जाई ।। (पृ. 852)

साध की सचु टहल कमानी ।।
तब होए मन सुध परानी ।। (पृ. 898)

सतिगुरु सेवि सरब फल पाए ।।
जनम जनम की मैलु मिटाए ।। (पृ. 1138)

5. **'शबद'** द्वारा भी मन की **'मैल' उतारने के विषय में गुरबाणी यूं उपदेश करती है** –

सबदि रते से निरमले तजि काम क्रोधु अहंकारु ।। (पृ. 58)

सबदि रते से निरमले चलहि सतिगुर भाइ ।। (पृ. 234)

गुर कै सबदि विचहु मैलु गवाइ ।।
निरमलु नामु वसै मनि आइ ।। (पृ. 560)

सबदे मनु तनु निरमलु होआ हरि वसिआ मनि आई ।। (पृ. 601)

नानक इसु मन की मलु इउ उतरै हउमै सबदि जलाइ ।। (पृ. 650)

हम कुचल कुचील अति अभिमानी **मिलि सबदे मैलु उतारी ।।** (पृ. 910)

मंनु धोवहु सबदि लागहु हरि सिउ रहहु चितु लाइ ।। (पृ. 919)

गुर सबदी मनु निरमलु होआ चूका मनि अभिमानु ।। (पृ. 1334)

6. **'कीरतन'** – हरि का कीरतन या यश गाने तथा सुनने से भी मन की 'मैल' उतर जाती है ।

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ।।
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ।। (पृ. 289)

हरि गुण गावै हउमै मलु खोइ ।। (पृ. 841)

जनम मरण मलु उतरै सचे के गुण गाइ ।। (पृ. 1099)

निरमल भए ऊजल जसु गावत बहुरि न होवत कारो ।। (पृ. 1225)

7. 'प्रेम भावना' से भी मन की मैल आसानी से उतर सकती है –

मनु तनु निरमलु होइआ लागी साचु परीति ।। (पृ. 48)

से जन सचे निरमले जिन सतिगुर नालि पिआरु ।। (पृ. 65)

प्रेम भगति राचे जन नानक हरि सिमरनि दहन भए मल ।। (पृ. 717)

से जन निरमल जो हरि लागे हरि नामे धरहि पिआरु ।। (पृ. 1131)

8. **'चरण धूल'** – गुरूओं, महापुरुषों तथा संत-भक्तों की **'चरण-धूल' को भी मायकी मैल उतारने के लिए 'अक्सीर' बताया गया है ।**

धूरि संतन की मसतकि लाइ ।।
जनम जनम की दुरमति मलु जाइ ।। (पृ. 897)

मागउ जन धूरि परम गति पावउ ।।
जनम जनम की मैलु मिटावउ ।। (पृ. 1080)

जनम जनम की मलु उतरै गुर धूड़ी नापै ।। (पृ. 1097)

साधू धूरि पुनीत करी ।।
मन के बिकार मिटहि प्रभ सिमरत
जनम जनम की मैलु हरी ।। (पृ. 1152)

गुर की धूरि करउ नित मजनु किलविख मैलु उतारीआ ।। (पृ. 1218)

सतसंगति की धूरि परी उडि नेत्री
सभ दुरमति मैलु गवाई ।। (पृ. 1263)

हमारे मन के 'मलिन' या 'निर्मल' होने का 'निर्णय' इस प्रकार किया जा सकता है –

हमारे मन का छोटी-छोटी बात पर –

शक करना
शिकायत करना
नुक्ताचीनी करना
क्रुद्ध होना

रोष करना
कुढ़ना
सड़ना-बलना
नाक चढ़ाना
माथे पर बल डालना
ऊँचा बोलना
क्रोधित होना
ताने देना
धमकियां देना
वैर-विरोध करना, आदि

वाला स्वभाव इस बात का पक्का तथा ठोस सबूत है कि हमारा मन 'मलिन' है। ऐसी तीव्र तथा गहरी मलिनता हमारे ख्यालों, सोच-विचार, स्वभाव तथा व्यवहार अथवा **जीवन के हर पक्ष में सहज स्वभाव ही प्रकट होती रहती है।** यह सभी मायकी अवगुण अहम् के भ्रम-भुलाव में से उत्पन्न होते हैं, इसलिए यह सारे अवगुण 'मायकी रंगत' वाले अथवा 'मलिन' होते हैं।

इसके विपरीत –

सहनशीलता
दया
क्षमा
प्यार
आनंद
मीठा-बोलना
बुरे का भला करना
देख कर अनदेखा करना
मैत्री-भाव
सेवा-भाव
स्वयं को न्यौछावर करना आदि

वाला **'दैवीय स्वभाव' हमारे मन अथवा अन्तःकरण के 'निर्मल' तथा 'मैल रहित' होने का प्रत्यक्ष चिन्ह अथवा प्रमाण है** क्योंकि इन सभी दैवीय गुणों का **'स्रोत'** ईश्वर है, जो स्वयं मैल-रहित है तथा **'सदा निर्मल' है।**

(समाप्त)